



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

07-06-2021 को सुरक्षित

22-06-2021 को घोषित

डब्ल्यू.पी.सी.आर. क्र. 864/2019

- गुरुशरण साहू, पिता स्वर्गीय अवध राम साहू, आयु लगभग 48 वर्ष, निवासी क्वा. क्र. मेड-03, सिविल लाईन धमतरी, तहसील व जिला-धमतरी, छत्तीसगढ़

-- याचिकाकर्ता

विरुद्ध

- चुम्मन लाल सिन्हा, पिता स्वर्गीय खमहन लाल सिन्हा, आयु लगभग 34 वर्ष, निवासी सरबदा, थाना व तहसील गुरुर, जिला बालोद, छत्तीसगढ़

-- उत्तरवादी

याचिकाकर्ता की ओर से श्री कुणाल दास, अधिवक्ता

उत्तरवादी की ओर से श्री सुनील साहू, अधिवक्ता

माननीय श्री न्यायमूर्ति नरेन्द्र कुमार व्यास

सी.ए.वी. आदेश

- याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत यह रिट याचिका (दाण्डिक) दायर की है, जिसमें विद्वान सत्र न्यायाधीश, धमतरी द्वारा *गुरुशरण साहू बनाम चुम्मन लाल सिन्हा* के मामले में दाण्डिक पुनरीक्षण क्र. 26/2019 में पारित आदेश दिनांक 18.03.2019 की वैधता और औचित्य को चुनौती दी गई है, साथ ही विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी धमतरी (छ.ग.) द्वारा दाण्डिक प्रकरण क्र. 183/2014 में 26.10.2018 को आवेदन निरस्त करने का आदेश यह निष्कर्ष दर्ज करते हुए किया गया है कि चेक की छायाप्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में नहीं लिया जा सकता है।
- रिट याचिका (दाण्डिक) में प्रस्तुत संक्षिप्त तथ्य यह है कि उत्तरवादी ने याचिकाकर्ता से 04.07.2012 को 1,00,000/- रुपये का ऋण लिया और उसके एवज में उसने



25.07.2012 को उत्तरवादी को एच.डी.एफ.सी. बैंक का चेक क्रमांक 286705 दिया। याचिकाकर्ता ने उक्त चेक को 31.07.2012 को सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, शाखा धमतरी में संचालित बैंक खाता क्रमांक 1947051791 में क्लीयरेंस के लिए प्रस्तुत किया। बैंक द्वारा उसी दिन अपर्याप्त शेष राशि के कारण चेक को अनादरित कर दिया गया। इसके बाद उत्तरवादी ने उससे एक माह का समय देने का अनुरोध किया ताकि वह पूरी राशि बैंक में जमा कर सके ताकि चेक को आदरित किया जा सके। याचिकाकर्ता ने पुनः 18.09.2012 को चेक प्रस्तुत किया जो अपर्याप्त शेष राशि के कारण पुनः अनादरित हो गया।

3. याचिकाकर्ता ने परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (जिसे आगे 'एन.आई. अधिनियम' के नाम से निर्दिष्ट किया जाएगा) की धारा 138 के तहत उत्तरवादी को एक नोटिस भेजा, जिसका न तो जवाब दिया गया और न ही याचिकाकर्ता को भुगतान किया गया। इसके बाद, उन्होंने 05.11.2012 को विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष एन.आई. अधिनियम की धारा 138 के तहत परिवाद दर्ज की। पंजीयन से पूर्व, जैसा कि द.प्र.सं. की धारा 200 के तहत आवश्यक है, याचिकाकर्ता ने चेक, चेक अग्रेषण ज्ञापन और चेक के अनादर के बारे में बैंक द्वारा सूचना जैसे दस्तावेज प्रदर्शकित किए। विद्वान विचारण न्यायालय ने शिकायत का परिवाद लेते हुए उत्तरवादी को समंस जारी किया जो विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, धमतरी के समक्ष उपस्थित हुए।

4. प्रकरण के विचारण के दौरान, जब साक्ष्य अभिलिखित किए जा रहे थे, मूल चेक और अन्य संगत दस्तावेज खो गए थे। याचिकाकर्ता ने 14.08.2012 को भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 65 के तहत द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति के लिए एक आवेदन दायर किया, जिसमें मुख्य रूप से यह तर्क दिया गया कि उसने परिवाद के साथ चेक की छायाप्रति, सेंट्रल बैंक, शाखा-धमतरी द्वारा जारी रिटर्न मेमो, एच.डी.एफ.सी. बैंक द्वारा चेक के अनादर के संबंध में दिया गया ज्ञापन पहले ही प्रस्तुत कर दिया है, परन्तु मूल दस्तावेज खो गए हैं, उसके द्वारा ईमानदारी से किए गए प्रयासों के बावजूद, मूल दस्तावेज का पता नहीं चल पाया है, इसलिए, उसने प्रार्थना की कि उक्त दस्तावेजों की छायाप्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में अभिलेख पर लिया जाए।

5. आवेदन को विद्वान विचारण न्यायालय ने 26.10.2018 को यह निष्कर्ष दर्ज करके निरस्त कर दिया था कि छायाप्रति को द्वितीयक साक्ष्य नहीं कहा जा सकता है। विद्वान



विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष भी दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता ने द्वितीयक साक्ष्य दर्ज करने के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया का पालन नहीं किया है क्योंकि यह आवश्यक है कि अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री होनी चाहिए जो दर्शाती है कि उचित परिश्रम के बावजूद मूल दस्तावेजों का पता नहीं लगाया जा सका। इसके बाद, उन्होंने विद्वान सत्र न्यायाधीश धमतरी के समक्ष दायित्व पुनरीक्षण क्र. 26/2019 दायर किया। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपने आदेश दिनांक 18.03.2019 के तहत उक्त दायित्व पुनरीक्षण को निरस्त कर दिया है। दोनों आदेशों को याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका (दायित्व) में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत चुनौती दी है। रिट याचिका की सुनवाई के दौरान, पक्षकारों द्वारा दो विवादक उठाए गए हैं और वे इस प्रकार हैं:

(i) क्या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश की वैधता और औचित्य पर सवाल उठाने वाली रिट याचिका (दायित्व) पोषणीय है?

(ii) क्या साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के तहत दस्तावेज की छायाप्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में लिया जा सकता है?

6. विवादक क्र. (i) के संबंध में उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका (दायित्व) की पोषणीयता पर आपत्ति उठाई, जिसमें मुख्य रूप से तर्क दिया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता एक पूर्ण संहिता है, जिसे याचिकाकर्ता ने विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष पुनरीक्षण दायर करके समाप्त कर दिया है। एक बार यदि याचिकाकर्ता ने दंड प्रक्रिया संहिता के तहत उपलब्ध उपचार खत्म कर लिया है, तो उसे दंड प्रक्रिया संहिता के तहत उपलब्ध उपचार ही खत्म कर देना चाहिए, अर्थात्, उसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका (दायित्व) के स्थान पर द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत याचिका दायर करनी चाहिए थी। उक्त तर्क का खण्डन करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत इस न्यायालय द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति एक ही है, क्योंकि किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए दोनों शक्तियों का प्रयोग बहुत कम और संयम से किया जाना चाहिए, इसलिए, विद्वान सत्र न्यायाधीश और विद्वान मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी द्वारा पारित आदेशों का विरोध करने वाली रिट याचिका (दायित्व) पोषणीय है।



7. उत्तरवादी द्वारा उठाया गया विवादक अब *रेस-इंटेंग्रा* नहीं है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *गिरीश कुमार सुनेजा विरुद्ध केंद्रीय जांच ब्यूरो*¹ के मामले में पहले ही इस मुद्दे पर निर्णय ले लिया है और पैराग्राफ संख्या 38 में निम्नानुसार निर्णय दिया है:-

"38. द.प्र.सं. निस्संदेह अपने आप में एक पूर्ण संहिता है। जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं, द.प्र.सं. की धारा 397(2) के तहत विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग मात्र अंतिम आदेशों और अंतरिम आदेशों के संबंध में किया जाना है। द.प्र.सं. की धारा 482 के तहत शक्ति का प्रयोग केवल द.प्र.सं. के तहत पारित आदेश को प्रभावी करने के लिए अथवा किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने अथवा अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अंतरिम आदेशों के संबंध में किया जाना है। जैसा कि ऊपर संकेत दिया गया है, इस शक्ति का प्रयोग केवल दुर्लभतम मामलों में ही किया जाना चाहिए, अन्यथा नहीं। यदि स्थिति ऐसी है, और हमारा विचार है कि ऐसा ही है, तो संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 का सहारा लेना शायद केवल सबसे असाधारण मामले में ही स्वीकार्य होगा। उच्च न्यायालय के संवैधानिक क्षेत्राधिकार का आह्वान करने के लिए जब दंड प्रक्रिया संहिता अभियुक्त व्यक्ति के लाभ के लिए निष्पक्ष और शीघ्र सुनवाई के हित में इसे प्रतिबंधित करती है, तो हमें यह प्रस्ताव स्वीकार करना कठिन लगता है कि चूंकि अनुच्छेद संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 अभियुक्त व्यक्ति के लिए उपलब्ध हैं, इन प्रावधानों का सहारा उन मामलों में लिया जाना चाहिए जो दुर्लभतम न हों, बल्कि मामूली विवादक हों।"

8. *गिरीश कुमार सुनेजा (सुप्रा)* में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के मद्देनजर, मेरा विचार है कि रिट याचिका (दाण्डिक) दाण्डिक पुनरीक्षण में विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध पोषणीय है। इसलिए, उत्तरवादी द्वारा उठाया गया विवादक क्रमांक 1 उसके विरुद्ध जाता है और यह न्यायालय पाती है कि रिट याचिका (दाण्डिक) पोषणीय है।
9. विवादक क्र. (ii) के संबंध में — विवादक क्र. 2 के विनिश्चय के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 63 और 65 के प्रावधानों को पुनः उद्धृत करना आवश्यक है।

1 2017 (14) एस.सी.सी. 809



भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 63 नीचे उद्धृत है:-

"63. **द्वितीयिक साक्ष्य**—द्वितीयिक साक्ष्य से अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत आते हैं—

- (1) एतस्मिन्पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अधीन दी हुई प्रमाणित प्रतियां;
- (2) मूल से ऐसी यान्त्रिक प्रक्रियाओं द्वारा, जो प्रक्रियाएं स्वयं ही प्रति की शुद्धता सुनिश्चित करती हैं, बनाई गई प्रतियां तथा ऐसी प्रतियों से तुलना की हुई प्रतिलिपियां;
- (3) मूल से बनाई गई या तुलना की गई प्रतियां;
- (4) उन पक्षकारों के विरुद्ध, जिन्होंने उन्हें निष्पादित नहीं किया है, दस्तावेजों के प्रतिलेख;
- (5) किसी दस्तावेज की अन्तर्वस्तु का उस व्यक्ति द्वारा, जिसने स्वयं उसे देखा है, दिया हुआ मौखिक वृत्तांत।

साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 नीचे उद्धृत है:-

"65. **अवस्थाएं जिनमें दस्तावेजों के सम्बन्ध में द्वितीयिक साक्ष्य दिया जा सकेगा**—
किसी दस्तावेज के अस्तित्व, दशा या अन्तर्वस्तु का द्वितीयिक साध्य निम्नलिखित अवस्थाओं में दिया जा सकेगा—

- (क) जबकि यह दर्शित कर दिया जाए या प्रतीत होता हो कि मूल ऐसे व्यक्ति के कब्जे में या शक्त्यधीन है :-जिसके विरुद्ध उस दस्तावेज का साबित किया जाना ईप्सित है, अथवा जो न्यायालय की आदेशिका की पहुंच से बाहर है, या ऐसी आदेशिका के अध्यक्ष नहीं है, अथवा जो उसे पेश करने के लिए वैध रूप से आबद्ध है, और जब कि ऐसा व्यक्ति धारा 66 में वर्णित सूचना के पश्चात् उसे पेश नहीं करता है,
- (ख) जब कि मूल के अस्तित्व, दशा या अन्तर्वस्तु को उस व्यक्ति द्वारा, जिसके विरुद्ध उसे साबित किया जाना है या उसके हित प्रतिनिधि द्वारा लिखित रूप में स्वीकृत किया जाना साबित कर दिया गया है,
- (ग) जबकि मूल नष्ट हो गया है, या खो गया है अथवा जबकि उसकी अन्तर्वस्तु का साक्ष्य देने की प्रस्थापना करने वाला पक्षकार अपने स्वयं के व्यतिक्रम या उपेक्षा से अनुद्धत अन्य किसी कारण से उसे युक्तियुक्त समय में पेश नहीं कर सकता



(घ) जबकि मूल इस प्रकृति का है कि उसे आसानी से स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता,

(ङ) जबकि मूल धारा 74 के अर्थ के अन्तर्गत एक लोक दस्तावेज है,

(च) जबकि मूल ऐसी दस्तावेज है जिसकी प्रमाणित प्रति का साक्ष्य में दिया जाना इस अधिनियम द्वारा या भारत में प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अनुज्ञात है,

(छ) जबकि मूल ऐसे अनेक लेखाओं या अन्य दस्तावेजों से गठित है जिनकी न्यायालय में सुविधापूर्वक परीक्षा नहीं की जा सकती और वह तथ्य जिसे साबित किया जाना है सम्पूर्ण संग्रह का साधारण परिणाम है। अवस्थाओं (क), (ग) और (घ) में दस्तावेजों की अन्तर्वस्तु का कोई भी द्वितीयक साध्य ग्राह्य है। अवस्था (ख) में वह लिखित स्वीकृति ग्राह्य है। अवस्था (ङ) या (च) में दस्तावेज की प्रमाणित प्रति ग्राह्य है, किन्तु अन्य किसी भी प्रकार का द्वितीयक साक्ष्य ग्राह्य नहीं है। अवस्था (छ) में दस्तावेजों के साधारण परिणाम का साध्य ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा दिया जा सकेगा जिसने उनकी परीक्षा की है और जो ऐसी दस्तावेजों की परीक्षा करने में कुशल है।"

10. प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि निम्नलिखित को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में शामिल किया जा सकता है:-

7.1 यदि वह प्रमाणित प्रतिलिपि है

7.2 मूल से ऐसी यान्त्रिक प्रक्रियाओं द्वारा, जो प्रक्रियाएं स्वयं ही प्रति की शुद्धता सुनिश्चित करती हैं, बनाई गई प्रतियां तथा ऐसी प्रतियों से तुलना की हुई प्रतिलिपियां

7.3 मूल से बनाई गई या तुलना की गई प्रतियां

7.4 उन पक्षकारों के विरुद्ध, जिन्होंने उन्हें निष्पादित नहीं किया है, दस्तावेजों के प्रतिलेख

7.4 किसी दस्तावेज की अन्तर्वस्तु का उस व्यक्ति द्वारा, जिसने स्वयं उसे देखा है, दिया हुआ मौखिक वृत्तांत।

11. भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 63 के खंड 2 और 3 के अवलोकन से यह कहा जा सकता है कि किसी यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा दस्तावेज की प्रतिलिपि प्राप्त की जा सकती है, परंतु याचिकाकर्ता को अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री रखकर इसकी शुद्धता और सटीकता



सुनिश्चित करनी होगी। यहां यह उल्लेख करना उचित है कि याचिकाकर्ता द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष दायर आवेदन में ऐसा कोई संकेत नहीं है जो यह इंगित करे कि इसकी शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए इसे यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया गया है। यहां तक कि तर्क के लिए अगर हम यह मान भी लें कि यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा सटीक छायाप्रति प्राप्त की गई है, तो यह आम बात है कि उक्त छायाप्रति पर किसी अन्य छायाप्रति को इंटर-प्लॉट करके, छायाप्रति प्राप्त की जा सकती है, इसलिए छायाप्रति की शुद्धता हमेशा संदेह के काले बादलों से घिरी रहती है। वर्तमान आवेदन में चूंकि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के तहत ऐसा कोई कथन नहीं है कि छायाप्रति की तुलना मूल से की गई थी और यह मूल की सटीक छायाप्रति थी और इसके अलावा उक्त छायाप्रति प्राप्त करने वाले व्यक्ति के संबंध में शपथपत्र दायर नहीं किया गया है। अभिलेख से छायाप्रति की हॉलमार्क, प्रामाणिकता और सटीकता को पहचानना कठिन है।

12. यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड विरुद्ध अन्बारी एवं अन्य² के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 3 में निम्नानुसार निर्णय दिया है:—

"3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि चालक लाइसेंस की वैधता के बारे में बिंदु अपीलार्थी ने मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण के समक्ष उठाया था और न्यायाधिकरण ने चालक लाइसेंस होने का दावा करने वाले दस्तावेज की छायाप्रति स्वीकार करके और यह निष्कर्ष दर्ज करके कि चालक के पास वैध लाइसेंस था, विधि की गंभीर गलती की है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के उक्त तर्क पर विचार नहीं किया है और बिना कोई कारण बताए अपील को निरस्त कर दिया है। न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय भी यह समझने में विफल रहे हैं कि छायाप्रति प्रस्तुत करना यह साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं था कि चालक के पास वैध लाइसेंस था, जबकि अपीलार्थी द्वारा इस तथ्य को चुनौती दी गई थी और छायाप्रति की विशुद्धता को स्वीकार नहीं किया गया था। इसलिए, एफ.ए.ओ. क्र. 2368/1998 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए। तदनुसार, हम इस अपील को स्वीकार करते हैं और पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देने के बाद उक्त



अपील पर नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को वापस भेजते हैं।"

13. जे. यशोदा बनाम के. शोभा रानी³ के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ क्र. 7, 8 और 9 में निम्नानुसार निर्णय दिया है:—

"7. द्वितीयक साक्ष्य, सामान्य नियम के अनुसार, प्राथमिक साक्ष्य की अनुपस्थिति में ही ग्राह्य होता है। यदि मूल दस्तावेज को ही उस पक्षकार द्वारा अमान्य पाया जाता है जिसने इसे वैध साबित करने में विफलता दिखाई है, तो वही पक्षकार इसकी सामग्री के द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने का हकदार नहीं है।

8. अनिवार्य रूप से, द्वितीयक साक्ष्य वह साक्ष्य है जो उस बेहतर साक्ष्य की अनुपस्थिति में दिया जा सकता है जिसे विधि पहले दिए जाने की अपेक्षा करता है, जब उसकी अनुपस्थिति का उचित स्पष्टीकरण दिया जाता है। धारा 63 में परिभाषा संपूर्ण है क्योंकि धारा घोषित करती है कि द्वितीयक साक्ष्य का "अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत आते हैं" और फिर द्वितीयक साक्ष्य के पाँच प्रकार हैं।

9. वह नियम जो सर्वाधिक सर्वमान्य है, अर्थात् मामले की प्रकृति के अनुसार सर्वोत्तम साक्ष्य ही पेश किया जाएगा, इस आपत्ति का निर्णय करता है कि उस नियम का अर्थ मात्र यह है कि जब तक उच्चतर या श्रेष्ठतर साक्ष्य आपके पास है या आप उस तक पहुँच सकते हैं, आप उसके संबंध में कोई निम्नतर प्रमाण नहीं देंगे। धारा 65 साक्ष्य में पेश किए गए दस्तावेजों की अंतर्वस्तु के प्रमाण से संबंधित है। किसी पक्षकार को द्वितीयक साक्ष्य पेश करने में सक्षम बनाने के लिए यह आवश्यक है कि पक्षकार मूल दस्तावेज के अस्तित्व और निष्पादन को साबित करे। धारा 64 के अधीन दस्तावेज प्राथमिक साक्ष्य द्वारा उपलब्ध कराए जाने हैं। तथापि, धारा 65 उल्लिखित परिस्थितियों में दस्तावेजों की स्थिति या अंतर्वस्तु के अस्तित्व का द्वितीयक साक्ष्य दिए जाने की अनुमति देती है। द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार किए जाने से पहले उक्त धारा में निर्धारित शर्तें पूरी होनी चाहिए। किसी दस्तावेज की विषय-वस्तु का द्वितीयक साक्ष्य तब तक ग्राह्य नहीं किया जा सकता जब तक कि मूल दस्तावेज को पहले इस तरह से प्रस्तुत न किया जाए कि उसे धारा में दिए गए किसी एक या दूसरे मामले के अंतर्गत लाया जा सके। अशोक दुलीचंद बनाम



माधवलाल दुबे और अन्य [1975(4) एस.सी.सी. 664] में, अन्य बातों के साथ-साथ यह माना गया:

"पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के पश्चात, हम इस राय पर हैं कि इस संबंध में उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के खंड (क) के अनुसार, किसी दस्तावेज के अस्तित्व, स्थिति या अंतर्वस्तु का द्वितीयक साक्ष्य तब दिया जा सकता है, जब मूल दस्तावेज उस व्यक्ति के कब्जे या शक्ति में दिखाया गया हो अथवा ऐसा प्रतीत होता हो, जिसके विरुद्ध दस्तावेज को साबित करने की मांग की गई हो अथवा किसी ऐसे व्यक्ति के कब्जे में हो, जो इसे प्रस्तुत करने के लिए विधिक रूप से बाध्य किसी व्यक्ति की न्यायालय की प्रक्रिया की पहुंच से बाहर हो या उसके अधीन न हो, और जब धारा 66 में उल्लिखित नोटिस के पश्चात ऐसा व्यक्ति इसे प्रस्तुत नहीं करता है। धारा 65 के खंड (ख) से (छ) कुछ अन्य आकस्मिकताओं को निर्दिष्ट करते हैं, जिनमें दस्तावेज से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य दिया जा सकता है, परंतु हम उन खंडों से चिंताशील नहीं हैं, क्योंकि पक्षकारों का यह सामान्य मामला है कि वर्तमान मामला उन खंडों के अंतर्गत नहीं आता है। अपने मामले को धारा 65 के खंड (क) के दायरे में लाने के लिए, अपीलार्थी ने उत्तरवादी क्र. 1 के साक्षी के रूप में परीक्षित होने से पूर्व 4 जुलाई, 1973 को आवेदन दायर किए थे जिनमें प्रार्थना की गई कि उक्त उत्तरवादी को मूल पांडुलिपि प्रस्तुत करने का आदेश दिया जाए, जिसकी छायाप्रति, अपीलार्थी के अनुसार, उसने दाखिल की थी। अपीलार्थी द्वारा यह भी प्रार्थना की गई कि यदि उत्तरवादी क्र. 1 ने इस बात से इनकार किया कि उक्त पांडुलिपि उसके द्वारा लिखी गई थी, तो छायाप्रति की जांच हस्तलिपि विशेषज्ञ से कराई जा सकती है। अपीलार्थी ने अपने आवेदनों के समर्थन में शपथपत्र भी दाखिल किया। हालांकि, शपथपत्र में यह कहीं नहीं कहा गया था कि मूल दस्तावेज, जिसकी छायाप्रति अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गई थी, उत्तरवादी. 1 के कब्जे में था। अभिलेख पर कोई अन्य सामग्री भी नहीं थी, जो यह इंगित करती हो कि मूल दस्तावेज उत्तरवादी क्र. 1 के कब्जे में था। अपीलार्थी यह स्पष्ट करने में भी विफल रहा कि वे कौन सी परिस्थितियाँ थीं, जिनके तहत छायाप्रति तैयार की गई थी और जिस समय इसकी तस्वीर ली





गई थी, उस समय मूल दस्तावेज किसके कब्जे में था। उत्तरवादी क्र. 1 ने अपने शपथपत्र में कब्जे में होने से इनकार किया, जो उच्च न्यायालय को संदेह से परे नहीं लगा। सभी परिस्थितियों को देखते हुए, उच्च न्यायालय को संदेह से परे नहीं लगा। सभी परिस्थितियों को देखते हुए, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी द्वारा छायाकॉपी के रूप में द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कोई आधार नहीं रखा गया था। हमें उच्च न्यायालय के उपरोक्त आदेश में कोई ऐसी कमी नहीं दिखती जो इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप को उचित ठहरा सके।"

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *अन्बारी एवं अन्य* (सुप्रा) तथा *जे. यशोदा* (सुप्रा) में निर्धारित विधि के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के खंड (क) के अनुसार किसी दस्तावेज के अस्तित्व, स्थिति या विषय-वस्तु के बारे में द्वितीयक साक्ष्य तब दिया जा सकता है, जब मूल दस्तावेज उस व्यक्ति के कब्जे अथवा शक्ति में दिखाया गया हो या ऐसा प्रतीत होता हो, जिसके विरुद्ध दस्तावेज को साबित करने की मांग की गई हो या जो व्यक्ति न्यायालय की प्रक्रिया की पहुंच से बाहर हो या उसके अधीन न हो या जो इसे पेश करने के लिए विधिक रूप से बाध्य हो। खंड (ख) से (घ) कुछ अन्य आकस्मिकताओं को संतुष्ट करता है, जिसमें दस्तावेज से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य लिया जा सकता है।
15. याचिकाकर्ता यह स्पष्ट करने में विफल रहा कि किन परिस्थितियों में छायाप्रति तैयार की गई और छायाप्रति तैयार किए जाने के समय मूल दस्तावेज किसके पास था। इन परिस्थितियों को देखते हुए, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि छायाप्रति के रूप में द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कोई आधार नहीं रखा गया है। इस प्रकार, यह स्थापित किया जा सकता है कि छायाप्रति न तो प्राथमिक साक्ष्य है और न ही द्वितीयक साक्ष्य क्योंकि पक्षकारों को यह साबित करना आवश्यक है कि ली गई छायाप्रति मूल की सटीक प्रति है या नहीं। इसलिए, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के मद्देनजर पुनरीक्षण न्यायालय के साथ-साथ न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी ने आवेदन को निरस्त करते समय कोई त्रुटि नहीं की है।
16. विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी और विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय ने द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति के लिए आवेदन को निरस्त करते समय कोई अवैधता या



अनियमितता नहीं की है जिसके लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

17. तदनुसार, रिट याचिका (दाण्डिक) गुण-दोष से रहित होने के कारण निरस्त की जाती है।
18. व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

सही/-
(नरेन्द्र कुमार व्यास)
न्यायाधीश

किशोर

====0000====

(Translation has been done with the help of AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।